मोहम्मद अहमद खान

बनाम

शाह बानो बेगम और अन्य

(23 अप्रैल, 1985)

[मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़, न्यायाधिपति डी० ए० देसाई, ओ० चिन्नप्पा रेड्डी, ई० एस० वेंकटरामय्या और रंगनाथ मिश्र]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 125—पत्नी का भरण-पोषण का अधिकार—पर्याप्त साधनों वाले पति के द्वारा अपर्याप्त साधनों वाली पत्नी को भरण-पोषण भत्ता देने से इन्कार करना—धारा 125 एक धर्म-निरपेक्ष उपबंध है; इस धारा के द्वारा प्रदत्त अधिकार का प्रयोग पक्षकारों की स्वीय विधि अर्थात् उनके द्वारा माने जाने वाले धर्म से प्रभावित नहीं होता, क्योंकि यह धारा दण्ड प्रक्रिया संहिता का भाग है, सिविल (स्वीय) विधियों का नहीं, जो धर्म विशेष के पक्षकारों के अधिकारों और बाध्यताओं को लागू होती हैं। अतः एक ऐसी मुस्लिम पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, धारा 125 के अधीन भरण-पोषण पाने की हकदार है।

मुस्लिम स्वीय विधि (सपठित दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125)—इद्दत के दौरान पत्नी को भरण-पोषण का संदाय—यदि ऐसी पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है तो उसके भरण-पोषण की व्यवस्था करने के बारे में मुस्लिम पति की बाध्यता इद्दत की समाप्ति पर ही समाप्त हो जाती है। किन्तु यदि वह अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 का अवलम्ब ले सकती है। अतः इस मुद्दे पर मुस्लिम विधि और दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में कोई द्वंद्व नहीं है।

मुस्लिम स्वीय विधि [सपठित दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 127(3)(ख)]—मेहर और "विवाह-विच्छेद पर" संदेय राशि में अंतर—मेहर वह राशि है जो पत्नी, पति से विवाह के प्रतिफल-

1985(4) eILR(PAT) SC 1

स्वरूप प्राप्त करने की हकदार होती है, न कि वह राशि जो "विवाह-विच्छेद पर" संदेय है—पति, पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप मेहर प्रदान करता है। अतः मेहर वह राशि नहीं है जिसको धारा 127(3)(ख) में "विवाह-विच्छेद पर" संदेय राशि कहा गया है, क्योंकि जो (मेहर) राशि विवाह के प्रतिफलस्वरूप संदेय है, उसे विवाह-विच्छेदस्वरूप संदेय नहीं कहा जा सकता।

प्रत्यर्थी, (शाह बानो बेगम) एक मुस्लिम पत्नी ने अपने अधिवक्ता पति (मोहम्मद अहमद खां) के विरुद्ध इन्दौर के न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन 500 रुपये प्रतिमास के भरण-पोषण के भत्ते के लिए अर्जी फाइल की थी। अपीलार्थी का, जो कि वृत्ति से अधिवक्ता है, विवाह सन् 1932 में प्रत्यर्थी के साथ हुआ था। इस विवाह से तीन पुत्र और दो पुत्रियां उत्पन्न हुईं। सन् 1975 में अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को अपने घर से निकाल दिया था। 6 नवम्बर, 1978 को अपीलार्थी ने अप्रतिसंहरणीय तलाक (इर्रिवोकेबल डाइवोर्स) के द्वारा प्रत्यर्थी का विवाह-विच्छेद कर दिया। भरण-पोषण के बारे में प्रत्यर्थी की अर्जी के विरुद्ध उस (अपीलार्थी) की प्रतिरक्षा यह थी कि चूंकि उसने प्रत्यर्थी का विवाह-विच्छेद कर दिया था, इसलिए वह उसकी पत्नी नहीं रह गई थी; यह कि इसलिए प्रत्यर्थी को भरण-पोषण देने की उस पर कोई बाध्यता नहीं थी; यह कि उसने पहले ही उसे लगभग 2 वर्ष के लिए 200 रुपये प्रतिमास की दर से भरण-पोषण का संदाय कर दिया था और यह कि उसने इद्दत की अवधि के दौरान, न्यायालय में, पहले ही 3 हजार रुपये की रकम डावर (मेहर) के रूप में जमा करा दी थी। अगस्त, 1979 में विद्वान् मजिस्ट्रेट ने प्रत्यर्थी को भरण-पोषण के रूप में 25 रुपए प्रतिमास की "यथेष्ट" राशि देने के लिए अपीलार्थी को निदेश दिया। यहां यह उल्लेख कर दिया जाए कि प्रत्यर्थी ने यह अभिकथन किया था कि अपीलार्थी की लगभग 60,000 रुपए प्रति वर्ष की वृत्तिक आय है। जुलाई, 1980 में प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए एक पुनरीक्षण आवेदन में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने भरण-पोषण की रकम को बढ़ाकर 179.20 रुपए प्रतिमास कर दिया था। अब पति ने उच्चतम न्यायालय में विशेष इजाज़त से यह अपील की है।

पति की ओर उन मध्यक्षेपियों की, जो उसका समर्थन करते हैं, दलील यह है कि मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने का पति का दायित्व, जिसका "विवाह-विच्छेद" हो गया है, इद्दत की अवधि तक

ही सीमित है। अपनी इस प्रतिपादना के समर्थन में उन्होंने कुछ पाठ्य-पुस्तकों में अंतर्विष्ट विधि के कथनों का अवलंब लिया।

अपीलार्थी की दलील का दूसरा मुद्दा यह है कि धारा 125 के अधीन किया गया आवेदन धारा 127(3)(ख) में अंतर्विष्ट उपबंधों के कारण खारिज करने योग्य है। यह धारा यथासंभव यह उपबंध करती है कि मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के आदेश को रद्द कर देगा, यदि पति, पत्नी का विवाह-विच्छेद कर देता है और पत्नी ने वह पूरी धनराशि प्राप्त कर ली है जो पक्षकारों को लागू किसी रूढ़िजन्य या स्वीय विधि के अधीन ऐसे "विवाह-विच्छेद पर" देय थी। इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन "विवाह-विच्छेद पर" पत्नी को कोई रकम संदेय है ?

क्या मुस्लिम स्वीय विधि अपनी ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था करने का उसके पति पर कोई उत्तरदायित्व नहीं डालती, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है ? क्या इद्दत की अवधि के लिए थोड़ी-सी रकम का संदाय करना मात्र ही मुस्लिम पति के विवाह-विच्छेद (तलाक) के विशेषाधिकार की कीमत है ? क्या इद्दत की अवधि के दौरान रकम का संदाय कर दिये जाने से ही, भले ही वह रकम पत्नी के भावी भरण-पोषण के लिए बिल्कुल ही अपर्याप्त हो, मुस्लिम पति सदैव के लिए पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था करने के उत्तरदायित्व से उन्मुक्त हो जाता है ? क्या मुस्लिम स्वीय विधि में ऐसे उपबंध हैं, जिनके अधीन पत्नी को "विवाह-विच्छेद पर" कोई रकम संदेय है और क्या दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 मुस्लिम स्वीय विधि में हस्तक्षेप करती है और क्या इन दोनों के बीच कोई द्वंद्व है ? ये और ऐसे ही कुछ अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न इस अपील में उठते हैं। अपील खारिज ~~करते~~-हुए, की गई / W

अभिनिर्धारित—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125(1)(क) के अधीन ऐसे व्यक्ति को जो पर्याप्त साधनों वाला है और जो अपनी ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इन्कार करता है जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, न्यायालय 500 रुपए से अनधिक दर से पत्नी को मासिक भत्ता संदाय करने के लिए (उस व्यक्ति को) कह सकता है। धारा 125(1) के स्पष्टीकरण के खंड (ख) के द्वारा "पत्नी" के अंतर्गत ऐसी स्त्री भी है जिसके पति ने उससे विवाह-विच्छेद कर लिया हो और जिसने पुनर्विवाह नहीं किया है। ये उपबंध इतने स्पष्ट और सूक्ष्म हैं कि इनमें किसी संदेह अथवा सफाई की गुंजाइश नहीं। पति-पत्नी में किसी एक

1985(4) eILR(PAT) SC 1

अथवा दोनों के द्वारा पालन किए जाने वाले (माने जाने वाले) धर्म का इन उपबंधों की स्कीम में कोई स्थान नहीं है। चाहे पति-पत्नी हिन्दू हों या मुसलमान, क्रिश्चियन हों या पारसी, नास्तिक हों या आस्तिक—ये सब बातें इन उपबंधों के लागू करने में विसंगत हैं। इसका कारण स्वयं-सिद्ध है और यह इस दृष्टि से कि धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का भाग है, सिविल विधि का भाग नहीं, जो हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम, दि शरीयत अथवा पारसी मैट्रीमोनियल ऐक्ट जैसी सिविल विधियों की तरह जो किसी धर्म विशेष को मानने वाले पक्षकारों के अधिकारों और बाध्यताओं को परिभाषित करती हैं और उनको लागू होती हैं। धारा 125 ऐसे वर्ग के व्यक्तियों के लिए शीघ्र और संक्षिप्त उपचार का उपबंध करने के लिए अधिनियमित की गई है जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं। तो फिर इस बात से क्या अंतर पड़ेगा कि उपेक्षित पत्नी, संतान या माता-पिता किस धर्म को मानते हैं? पर्याप्त साधनों वाले व्यक्तियों द्वारा इन व्यक्तियों के भरण-पोषण में की गई उपेक्षा और इन व्यक्तियों की अपने आपका भरण-पोषण करने की असमर्थता, वस्तुनिष्ठ कसौटियां हैं जो धारा 125 के लागू होने को अवधारित करती हैं। ये उपबंध जिनकी प्रकृति आवश्यक रूप से निरोधात्मक है, धर्म की सीमाओं को लांघते हैं। यह सही है कि ये उपबंध पक्षकारों की स्वीय विधि को अतिष्ठित नहीं करते, किंतु साथ ही पक्षकारों द्वारा माने जाने वाले धर्म अथवा स्वीय विधि की स्थिति जो उन्हें लागू होती है, तब तक ऐसी विधियों के लागू होने पर कोई कुप्रभाव नहीं डाल सकती जब तक कि, संविधान के ढांचे के अंतर्गत ऐसे उपबंधों का लागू होना धार्मिक समुदायों या वर्गों के परिभाषित प्रवर्ग तक सीमित न कर दिया जाए। ऐसे निकट संबंधियों का, जो कि निर्धन हैं, भरण-पोषण करने के लिए धारा 125 द्वारा अधिरोपित दायित्व आवारागर्दी और दीन-हीनता को रोकने में समाज के प्रति नागरिक की व्यक्तिगत बाध्यता पर आधारित है। यह बात विधि का नैतिक आदेश है और नैतिकता को किसी धर्म के साथ नहीं जोड़ा जा सकता। धारा 125(1) के स्पष्टीकरण के खंड (ख) में, जो "पत्नी" की यह परिभाषा करता है कि इसके अंतर्गत ऐसी पत्नी भी आती है, पति ने जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया है, इस बात को न्यायोचित ठहराने के लिए परिसीमनकारी ऐसे कोई शब्द नहीं हैं कि मुस्लिम स्त्रियां इसकी व्याप्ति से अपवर्जित हैं। धारा 125 की सही प्रकृति सही अर्थों में धर्म-निरपेक्ष है। (पैरा 7)

"पत्नी" की परिभाषा में ऐसी स्त्री को शामिल करके, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, उपर्युक्त निष्कर्षों को और भी अधिक बल मिलता है। "पत्नी" से, उसके द्वारा या उसके पति के द्वारा माने जाने वाले धर्म के

1985(4) eILR(PAT) SC 1

बावजूद भी, उपर्युक्त उपबंध में परिभाषित पत्नी अभिप्रेत है। अत: ऐसी मुस्लिम पत्नी जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, जब तक उसने पुनर्विवाह नहीं किया है, धारा 125 के प्रयोजन के लिए "पत्नी" है। इस धारा के अधीन उसे उपलब्ध कानूनी अधिकार, उसको लागू स्वीय विधि के उपबंधों के द्वारा अप्रभावित रहता है। (पैरा 9)

इस निष्कर्ष को कि धारा 125 के द्वारा प्रदत्त अधिकार का प्रयोग पक्षकारों की स्वीय विधि के बावजूद भी किया जा सकता है, विशेषकर मुस्लिम पक्षकारों के बारे में, संहिता की धारा 125(3) के द्वितीय परन्तुक के स्पष्टीकरण में अन्तर्विष्ट उपबंध से भी बल मिलता है। यह उपबंध यह कहता है कि यदि पति इस शर्त पर भरण-पोषण करने की प्रस्थापना करता है कि उसकी पत्नी उसके साथ रहे और वह पति के साथ रहने से इन्कार करती है तो मजिस्ट्रेट उसके द्वारा किए गए इन्कार के किन्हीं आधारों पर विचार कर सकता है और ऐसी प्रस्थापना के किए जाने पर भी वह इस धारा के अधीन आदेश दे सकता है, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि ऐसा आदेश देने के लिए न्यायसंगत आधार हैं। (पैरा 10)

मुस्लिम विधि की पाठ्य-पुस्तकों के कथन इस प्रतिपादना को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं कि मुस्लिम पति अपनी ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने के लिए, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया है और जो अपना भरण-पोषण करने के लिए समर्थ नहीं है, भरण-पोषण करने की बाध्यता के अधीन नहीं है। ऐसी अकिंचन पत्नी के लिए जिसका उसने विवाह-विच्छेद कर दिया है, भरण-पोषण की व्यवस्था के बारे में पति के दायित्व की सीमा, मात्रा और अवधि तीनों दृष्टि से, अवधारित करने के लिए मुस्लिम स्वीय विधि की सम्पूर्ण रूपरेखा को ध्यान में रखने की आवश्यकता होगी। मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन पति अपनी पत्नी के प्रति सम्मान के प्रतीक-स्वरूप "मेहर" संदाय करने के लिए आबद्ध है। यह सही है कि पति अपनी पत्नी को "मेहर" (डावर) देने के लिए जितनी रकम वह चाहे तय कर सकता है, किन्तु यह रकम "10 दिरहम" से कम नहीं हो सकती जो तीन या चार रुपए के बराबर है: (मुल्ला कृत "मोहम्मडन ला", 18वां संस्करण, पैरा 286, पृ० 308) किन्तु इस बात का विनिश्चय करने के लिए जीवन के यथार्थ को ध्यान में रखना चाहिए। मेहर पत्नी के सम्मान का प्रतीत है। मेहर के रूप में देय, तय की गयी राशि के बारे में साधारणत: यह समझा जाता है कि यह राशि विवाह और उसके पश्चात् की अवधि के दौरान पत्नी की सामान्य अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए है किंतु मुस्लिम स्वीय विधि के ये उपबंध

1985(4) eILR(PAT) SC 1

ऐसे मामलों के बारे में नहीं हैं जिनमें पत्नी विवाह-विच्छेद के बाद अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। पाठ्य-पुस्तकों के कथनों की व्याप्ति को उन मामलों में लागू करना न केवल गलत बल्कि अन्यायपूर्ण है, जिन मामलों में ऐसी पत्नी जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। विधि के इन कथनों का लागू किया जाना ऐसे वर्ग के मामलों तक ही सीमित किया जाना चाहिए, जिन मामलों में उस पत्नी की निर्धनता के कारण, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, आवारागर्दी या दीन-हीनता की कोई संभावना नहीं है। (पैरा 14)

चूंकि मुस्लिम स्वीय विधि, जो कि इद्दत की अवधि तक ही ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, के लिए पत्नी के दायित्व को सीमित करती है, धारा 125 द्वारा अनुध्यात स्थिति की न तो कल्पना करती है और न इसे स्वीकार करती है, इसलिए यह अभि-निर्धारित करना गलत होगा कि मुस्लिम पति, अपनी स्वीय विधि के अनुसार अपनी ऐसी पत्नी की, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, इद्दत की अवधि के पश्चात् भरण-पोषण करने की व्यवस्था की बाध्यता के अधीन नहीं है। अत: सही स्थिति यह है कि यदि ऐसी पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है तो उसके भरण-पोषण की व्यवस्था करने का पति का दायित्व इद्दत की अवधि की समाप्ति पर ही समाप्त हो जाता है। किन्तु यदि वह अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह धारा 125 का अवलंब लेने की हकदार है। इस विचार-विमर्श का परिणाम यह है कि ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था से संबंधित पति की बाध्यता के प्रश्न पर, जिस पत्नी का विवाह-विच्छेद कर दिया गया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, मुस्लिम स्वीय विधि और धारा 125 के अधीन उपबंधों में कोई द्वन्द्व नहीं है। (पैरा 14)

क्या मेहर पति द्वारा पत्नी को 'विवाह-विच्छेद (किए जाने) पर' संदेय है ? इस बारे में कुछ भ्रम इस तथ्य के कारण हुआ है कि मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन मेहर की रकम को दो भागों में बांट दिया जाता है—एक वह जो "तुरन्त" (प्रॉमट) कही जाती है जो कि मांगने पर संदेय है और दूसरी को "आस्थगित" (डैफर्ड) कहा जाता है जो कि मृत्यु अथवा विवाह-विच्छेद के कारण विवाह के विघटन पर संदेय होती है। किन्तु यह तथ्य कि आस्थगित मेहर विवाह के विघटन पर संदेय है, इस निष्कर्ष को न्यायोचित नहीं ठहरा सकता कि यह "विवाह-विच्छेद पर देय है।" यह मान लेते हुए कि किसी

मामले विशेष में मेहर की सम्पूर्ण रकम विवाह-विच्छेद के द्वारा विघटित विवाह पर संदेय आस्थगित वस्तु है फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह ऐसी रकम है जो 'विवाह-विच्छेद पर' संदेय है। विवाह-विच्छेद (तलाक) समय का ऐसा सुविधाजनक और निश्चित प्रक्रम हो सकता है जबकि आस्थगित रकम का संदाय पति द्वारा पत्नी को किया जाना होता है, किन्तु रकम का संदाय विवाह-विच्छेद के कारण नहीं हुआ है, और यही कुछ "विवाह-विच्छेद पर देय" अभिव्यक्ति से अभिप्रेत है जो संहिता की धारा 127(3)(ख) में आती है। यदि मेहर ऐसी रकम है जिसको विवाह के प्रतिफलस्वरूप पत्नी, पति से प्राप्त करने के लिए हकदार है, तो यह बात विवाह-विच्छेद के प्रतिफलार्थ संदेय रकम के बिल्कुल विपरीत है। विवाह-विच्छेद (तलाक) विवाह का विघटन कर देता है। अतः जो रकम विवाह के प्रतिफलार्थ संदेय है उसे संभवतः विवाह-विच्छेद के प्रतिफलार्थ संदेय रकम नहीं कहा जा सकता। आनुकल्पिक यह दलील कि मेहर पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप पति पर अधिरोपित एक बाध्यता है, इस बात के लिए पूर्णतः अहितकर है कि यह रकम विवाह-विच्छेद पर पत्नी को संदेय है। कोई भी व्यक्ति किसी स्त्री से प्रेम, सुन्दरता, विद्वता के कारण अथवा इनमें से किसी (कारण) के बिना भी विवाह कर सकता है और वह अपनी पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप उसके साथ कोई रकम देय तय कर सकता है। किन्तु वह उस स्त्री के सम्मान के प्रतीकस्वरूप उसका विवाह-विच्छेद कभी नहीं करता। अतः पत्नी को सम्मान-स्वरूप संदेय रकम "विवाह-विच्छेद पर देय" रकम नहीं हो सकती। (पैरा 24)

सरकार ने "पत्नी" अभिव्यक्ति में ऐसी पत्नी को शामिल करके, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, इसे परिभाषित करते हुए ऐसा परिवर्तन अंतःस्थापित किया था। सरकार ने यह उपबंध करके एक और परिवर्तन भी अंतःस्थापित किया कि यह तथ्य कि पति ने एक अन्य स्त्री से विवाह कर लिया है, उसके साथ रहने से पत्नी के इंकार का एक न्यायोचित आधार है। धारा 127(3)(ख) में अन्तर्विष्ट उपबंध इस भ्रम के कारण अंतःस्थापित किया गया है कि मेहर "विवाह-विच्छेद पर" संदेय रकम है। किंतु यह बात पत्नी को सम्मान के प्रतीकस्वरूप संदेय रकम को विवाह-विच्छेद पर संदेय रकम में नहीं बदल सकती। (पैरा 28)

अनुमोदित निर्णय

पैरा

[1981] [1981] 2 उम० नि० प० 839=(1980) 3 एस० सी० आर० 1127 :.
फजलुन बी० बनाम के० खादर वली; 4, 29, 30

1985(4) eILR(PAT) SC 1

[1979] 4 उम० नि० प० 398=(1979) 2 एस० सी० आर० 75 :
बाई ताहिरा बनाम **अली हुसैन फिदाअली चौथिया.** 4, 29

अवलम्बित निर्णय

[1970] 1 एस० सी० आर० 565 :
नानक चन्द बनाम **श्री चन्द्र किशोर अग्रवाल;** 8

[1954] (1954) 2 एस० सी० आर० 73, पृ० 84 :
जागीर कौर बनाम **जशवंत सिंह.** 8

निर्दिष्ट निर्णय

65 आई० ए० 119, पृ० 127 :
सैय्यद साबिर हुसैन बनाम **फर्जंद हुसैन;** 26

[1915-16] 43 इंडियन अपील्स 294 :
हमीरा बीबी बनाम **जुबेदा बीबी.** 25

विशेष अपीली अधिकारिता : 1981 की दांडिक अपील सं० 103.

1979 के दांडिक पुनरीक्षण सं० 320 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के 1 जुलाई, 1980 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत से की गयी अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री पी० गोविन्दन नायर, अशोक महाजन, एस० के० गम्भीर और श्रीमती कृपलानी तथा कुमारी संगीता
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री दानियाल लतीफी, नशीफ अहमद सिद्दीकी, एस० एन० सिंह और पी० एन० सिंह
मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की ओर से	सर्वश्री मोहम्मद युनुस सलीम और शकील अहमद
मध्यक्षेपी, जमात-उलेमाय-हिंद की ओर से	सर्वश्री एस० टी० देसाई और एस० ए० सैयद

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ ने दिया ।

मुख्य न्यायाधिपति चन्द्रचूड़—

इस अपील में सांविधानिक महत्त्व का कोई प्रश्न अन्तर्वलित नहीं है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि इसमें महत्त्व का कोई प्रश्न अन्तर्वलित नहीं है। कुछ प्रश्न जो सामान्य सिविल और दांडिक विधि के अधीन उद्भूत होते हैं वे समाज के उन बड़े वर्गों के लिए दूरगामी महत्त्व के होते हैं जिनके साथ पारम्परिकत: अन्यायपूर्ण व्यवहार किया गया है। महिलाएं एक ऐसा वर्ग है। मनु महाराज ने कहा है : 'न: स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति' अर्थात् स्त्री स्वतंत्रता प्राप्त नहीं करती। और यह अभिकथन किया गया है कि 'इस्लाम धर्म का गम्भीर मुद्दा स्त्री का अपकर्ष है'[1]। पैगम्बर मोहम्मद साहिब के बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने यह कहा है, और हम आशा करते हैं कि उनके बारे में यह बात गलत है कि 'स्त्री की रचना टेढ़ी पसली से की गयी थी और यदि तुम उसे मोड़कर सीधा करने का प्रयास करोगे तो यह टूट जाएगी; इसलिए अपनी पत्नियों के साथ दया का व्यवहार करो।'

2. यह अपील दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के लिए एक विवाह-विछिन्न (तलाक-शुदा) महिला स्त्री द्वारा फाइल किए गए आवेदन से उद्भूत होती है और इसमें एक सीधा प्रश्न उठता है, जो न केवल मुस्लिम महिलाओं के सामान्य हित का ही है और न केवल सामान्य स्त्रियों के हित का ही है अपितु उन सभी व्यक्तियों के सामान्य हित का है जो, पुरुषों और स्त्रियों का एक समान समाज बनाने की आकांक्षा रखते (करते) हुए, अपने आपको इस सुखद विश्वास (सपने) के भुलावे में डालते हैं कि मानवता ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रगति प्राप्त कर ली है। अपीलार्थी का, जो कि वृत्ति से अधिवक्ता है, विवाह सन् 1932 में प्रत्यर्थी के साथ हुआ था। इस विवाह से तीन पुत्र और दो पुत्रियां उत्पन्न हुई थीं। सन् 1975 में अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को अपने घर से निकाल दिया था। अप्रैल, 1978 में प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के विरुद्ध (दण्ड प्रक्रिया) संहिता की धारा 125 के अधीन विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग, इंदौर के न्यायालय में 500 रुपए प्रतिमास की दर से भरण-पोषण की मांग करते हुए एक अर्जी फाइल की थी। 6 नवम्बर, 1978 को अपीलार्थी ने अप्रतिसंहरणीय तलाक (इर्रिवोकेबल डाइवोर्स) के द्वारा प्रत्यर्थी का विवाह-विच्छेद कर दिया। भरण-पोषण के बारे में प्रत्यर्थी की अर्जी के विरुद्ध उसकी (अपीलार्थी) की प्रतिरक्षा यह थी कि चूंकि उसने प्रत्यर्थी का विवाह-विच्छेद कर दिया था

---

[1] एडवर्ड विलियम लेन : "सलेक्शन्स फ्राम कुरान", 1843 (पुनर्मुद्रित) पृष्ठ 90 (प्रस्तावना).

1985(4) eILR(PAT) SC 1

इसलिए वह उसकी पत्नी नहीं रह गयी थी; यह कि इसीलिए उस प्रत्यर्थी को भरण-पोषण देने की उस पर कोई बाध्यता नहीं थी; यह कि उसने पहले ही उसे लगभग 2 वर्ष के लिए 200 रुपए प्रतिमास की दर से भरण-पोषण का संदाय कर दिया था और यह कि उसने इद्दत की अवधि के दौरान न्यायालय में पहले ही 3 हजार रुपए की रकम डावर (मेहर) के रूप में जमा करा दी थी। अगस्त, 1979 में विद्वान् मजिस्ट्रेट ने प्रत्यर्थी को भरण-पोषण के रूप में 25 रुपए प्रतिमास की "यथेष्ट" राशि देने के लिए अपीलार्थी को निदेश दिया। यहां यह उल्लेख कर दिया जाए कि प्रत्यर्थी ने यह अभिकथन किया था कि अपीलार्थी की लगभग 60,000 रुपए प्रतिवर्ष की वृत्तिक आय है। जुलाई, 1980 में प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए एक पुनरीक्षण आवेदन में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने भरण-पोषण की रकम को बढ़ाकर 179·20 रुपए प्रतिमास कर दिया था। अब पति ने हमारे समक्ष विशेष इजाज़त से यह अपील की है।

3. क्या मुस्लिम स्वीय विधि (मुस्लिम पर्सनल लॉ) अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए भरण-पोषण की व्यवस्था करने की पति पर कोई बाध्यता अधिरोपित नहीं करता? निस्संदेह, मुसलमान पति अपनी पत्नी को जब कभी वह चाहे, अच्छे, बुरे या ऐसे-वैसे कारणों से भी और वस्तुतः बिना किसी कारण के भी त्याग देने का विशेषाधिकार रखता है। किंतु क्या इस विशेषाधिकार की कीमत इद्दत की अवधि के दौरान कुछ मामूली-सी रकम का संदाय ही है? और क्या विधि अपनी असमानता के क्षेत्र में भी इतनी निर्दय है कि चाहे पति इद्दत की अवधि के दौरान अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी के भरण-पोषण के लिए कितनी भी रकम दे, मात्र यह तथ्य कि उसने कुछ रकम का संदाय कर दिया है—चाहे वह कितनी ही कम क्यों न हो, उसे सदैव के लिए इतनी पर्याप्त रकम पत्नी को संदाय करने के कर्त्तव्य से उऋण कर देती है जिससे कि वह (पत्नी) किसी प्रकार से अपना जीवन-निर्वाह करने में समर्थ हो सके? और फिर क्या मुस्लिम स्वीय विधि में ऐसा कोई उपबंध है जिसके अधीन "विवाह-विच्छेद (हो जाने) पर" पत्नी को कुछ रकम संदेय है? ये कुछ-एक प्रश्न हैं, यद्यपि बड़े दुखदायी प्रश्न हैं, जो हमारे विनिश्चय के लिए उद्भूत होते हैं।

4. यह प्रश्न कि क्या संहिता की धारा 125 मुसलमानों को भी लागू होती है, इस न्यायालय के उन दो विनिश्चयों से समाप्त हो चुकी है, जो विनिश्चय **बाई ताहिरा बनाम अली हुसैन फिदाअली चोथिया**[1] और **फजलुन**

[1] (1979) 2 एस० सी० आर० 75.

बी बनाम के० खादर वली[1] में प्रतिवेदित किये गए हैं। इन निर्णयों में यह दृष्टिकोण अपनाया गया था कि विवाह-विछिन्न मुस्लिम पत्नी धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के लिए आवेदन करने के लिए हकदार है। किंतु हमारे विद्वान् बंधु न्या० मुर्तजा फजल अली और न्या० ए० वरदराजन् के द्वारा गठित खंड न्यायपीठ यह दृष्टिकोण अपनाना चाहती थी कि उक्त दोनों मामले सही तौर पर विनिश्चित नहीं किये गए हैं। अतः उन्होंने यह अपील 3 फरवरी, 1981 के अपने आदेश के द्वारा एक वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट कर दी, जो आदेश इस प्रकार है—

> "चूंकि इस मामले में दूरगामी महत्त्व के विधि के सारवान् प्रश्न अन्तर्वलित हैं, इसलिए हम यह महसूस करते हैं कि बाई ताहिरा **बनाम** अली हुसैन फिदा अली चोथिया और फजलुन बी **बनाम** के० खादर वली के मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों पर पुनर्विचार किये जाने की आवश्यकता है, क्योंकि हमारी राय में ये विनिश्चय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 127(3)(ख) की असंदिग्ध और स्पष्ट भाषा का उल्लंघन नहीं करते, जो कि इस विषय पर मुस्लिम विधि को अतिष्ठित करने की बात तो दूर, इसकी सुरक्षा करती है और इसको ऐसे मामलों में लागू करती है जहां कि पति ने पत्नी का विवाह-विच्छेद कर दिया हो और विनिर्दिष्ट 'डावर' की रकम का संदाय कर दिया गया हो तथा इद्दत की अवधि का पालन किया गया हो। हमें यह भी प्रतीत होता है कि ये विनिश्चय पति द्वारा विवाह-विच्छेद की मूल संकल्पना के विरुद्ध और मुस्लिम विधि के अधीन इसके परिणामों के विरुद्ध है, जो संकल्पना अभिव्यक्ततः मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लीकेशन ऐक्ट, 1937 की धारा 2 द्वारा सुरक्षित है। इस अधिनियम पर पूर्वोक्त विनिश्चयों में ध्यान नहीं दिया गया था। अतः हम यह निदेश देते हैं कि यह मामला तीन न्यायाधीशों से अधिक की एक वृहत्तर न्यायपीठ के द्वारा सुने जाने के लिए माननीय मु० न्या० के समक्ष रखा जाए।"

5. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125, जो भरण-पोषण के अधिकार के बारे में है, इस प्रकार है—

> **"पत्नी संतान और माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश :**
>
> 125(1) यदि पर्याप्त साधनों वाला कोई व्यक्ति—

---

[1] (1980) 3 एस० सी० आर० 1127.

(क) अपनी पत्नी का, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है;

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या भरण-पोषण करने से इन्कार करता है तो प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट ऐसी उपेक्षा या इन्कार के साबित हो जाने पर, ऐसे व्यक्ति को यह निदेश दे सकता है कि वह अपनी पत्नी...के भरण-पोषण के लिए कुल मिलाकर 500 रुपए से अनधिक की ऐसी मासिक दर पर जिसे मजिस्ट्रेट ठीक समझे, मासिक भत्ता दे।...............।

स्पष्टीकरण : इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए—

(क) ....

(ख) पत्नी के अंतर्गत ऐसी स्त्री भी है जिसके पति ने उससे विवाह-विच्छेद कर लिया है, या जिसने अपने पति से विवाह-विच्छेद कर लिया है और जिसने पुनर्विवाह नहीं किया है।

(2) ....

(3) यदि कोई व्यक्ति, जिसे आदेश दिया गया हो, उस आदेश का अनुपालन करने में पर्याप्त कारण के बिना असफल रहता है, तो उस आदेश के प्रत्येक भंग के लिए ऐसा कोई मजिस्ट्रेट देय रकम के ऐसी रीति से उद्गृहीत किए जाने के लिए वारंट जारी कर सकता है, जैसी रीति जुर्माने उद्गृहीत करने के लिए उपबंधित है, और उस वारंट के निष्पादित किए जाने के बाद प्रत्येक मास के न चुकाए गए पूरे भत्ते या उसके किसी भाग के लिए ऐसे व्यक्ति को एक मास तक की अवधि के लिए, अथवा यदि वह उससे पूर्व चुका दिया जाता है तो, चुका देने के समय तक के लिए, कारावास का दंड दिया जा सकता है।

परन्तु यह कि.........

परन्तु यह और कि यदि ऐसा व्यक्ति इस शर्त पर भरण-पोषण करने की प्रस्थापना करता है कि उसकी पत्नी उसके साथ रहे और

वह पति के साथ रहने से इन्कार करती है तो ऐसा मजिस्ट्रेट उसके द्वारा कथित इन्कार के किन्हीं आधारों पर विचार कर सकता है और ऐसी प्रस्थापना किए जाने पर भी वह इस धारा के अधीन आदेश दे सकता है, यदि उसका समाधान हो जाता है कि ऐसा आदेश देने के लिए न्यायसंगत आधार हैं।

स्पष्टीकरण : यदि पति ने अन्य स्त्री से विवाह कर लिया है या वह रखैल रखता है तो यह उसकी पत्नी के द्वारा उसके साथ रहने से इन्कार करने का निस्संदेह आधार माना जाएगा।"

6. धारा 127(3)(ख) जिस पर अपीलार्थी ने अपनी प्रतिरक्षा का भवन खड़ा किया है, इस प्रकार है :—

भत्ते में परिवर्तन :

127(1) ....

(2) ....

(3) जहां धारा 125 के अधीन कोई आदेश ऐसी स्त्री के पक्ष में दिया गया है, जिसके पति ने उससे विवाह-विच्छेद कर लिया है या जिसने अपने पति से विवाह-विच्छेद कर लिया है, वहां यदि मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि :—

(क) ....

(ख) उस स्त्री के पति ने उससे विवाह-विच्छेद कर लिया है और उस स्त्री ने उक्त आदेश के पूर्व या पश्चात् वह पूरी धनराशि प्राप्त कर ली है जो पक्षकारों को लागू किसी रूढ़िजन्य या सिविल विधि के अधीन ऐसे विवाह-विच्छेद पर देय थी, तो वह ऐसे आदेश को—

(i) उस दशा में जिसमें ऐसी धनराशि ऐसे आदेश से पूर्व दे दी गयी थी, उस आदेश के दिए जाने की तारीख से रद्द कर देगा।

(ii) किसी अन्य दशा में उस अवधि की, यदि कोई हो, जिसके लिए पति के द्वारा उस स्त्री को वास्तव में भरण-पोषण दिया गया है, समाप्ति की तारीख से रद्द कर देगा।"

1985(4) eILR(PAT) SC 1

7. धारा 125(1)(क) के अधीन ऐसे व्यक्ति को जो पर्याप्त साधनों वाला है और जो अपनी ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इन्कार करता है, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, न्यायालय 500 रुपए से अनधिक दर से पत्नी को मासिक भत्ता संदाय करने के लिए (उस व्यक्ति को) कह सकता है। धारा 125(1) के स्पष्टीकरण के खंड (ख) के द्वारा "पत्नी" के अंतर्गत ऐसी स्त्री भी है जिसके पति ने उससे विवाह-विच्छेद कर लिया हो और जिसने पुनर्विवाह नहीं किया है। ये उपबंध इतने स्पष्ट और सूक्ष्म हैं कि इनमें किसी संदेह अथवा सफाई की गुंजाइश नहीं। पति-पत्नी में से किसी एक अथवा दोनों के द्वारा पालन किए जाने वाले (माने जाने वाले) धर्म का इन उपबंधों की स्कीम में कोई स्थान नहीं है। चाहे पति-पत्नी हिन्दु हो या मुसलमान, क्रिश्चियन हो या पारसी, नास्तिक हो या आस्तिक—ये सब बातें इन उपबंधों के लागू करने में विसंगत हैं। इसका कारण स्वयं-सिद्ध है और यह इस दृष्टि से कि धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का भाग है, सिविल विधि का भाग नहीं, जो हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम, दि शरीयत अथवा पारसी मैट्रीमोनियल ऐक्ट जैसी सिविल विधियों की तरह जो किसी धर्म विशेष को मानने वाले पक्षकारों के अधिकारों और बाध्यताओं को परिभाषित करती है और उनको लागू होती है। धारा 125 ऐसे वर्ग के व्यक्तियों के लिए शीघ्र और संक्षिप्त उपचार का उपबंध करने के लिए अधिनियमित की गई है, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं। तो फिर इस बात से क्या अंतर पड़ेगा कि उपेक्षित पत्नी, संतान या माता-पिता किस धर्म को मानते हैं। पर्याप्त साधनों वाले व्यक्तियों द्वारा इन व्यक्तियों के भरण-पोषण में की गई उपेक्षा और इन व्यक्तियों की अपने आपका भरण-पोषण करने की असमर्थता, वस्तुनिष्ठ कसौटियां हैं, जो धारा 125 के लागू होने को अवधारित करती हैं। ये उपबंध, जिनकी प्रकृति आवश्यक रूप से निरोधात्मक है, धर्म की सीमाओं को लांघते हैं। यह सही है कि ये उपबंध पक्षकारों की स्वीय विधि को अतिष्ठित नहीं करते, किंतु साथ ही पक्षकारों द्वारा माने जाने वाले धर्म अथवा स्वीय विधि की स्थिति, जो उन्हें लागू होती है, तब तक ऐसी विधियों के लागू होने पर कोई कुप्रभाव नहीं डाल सकती, जब तक कि संविधान के ढांचे के अंतर्गत ऐसे उपबंधों का लागू होना धार्मिक समुदायों या वर्गों के परिभाषित प्रवर्ग तक सीमित न कर दिया जाए। ऐसे निकट संबंधियों का, जो कि निर्धन हैं, भरण-पोषण करने के लिए धारा 125 द्वारा अधिरोपित दायित्व अवारागर्दी और दीनहीनता को रोकने में समाज के प्रति नागरिक की व्यक्तिगत बाध्यता पर आधारित है। यह बात विधि का नैतिक आदेश है और नैतिकता को किसी

1985(4) eILR(PAT) SC 1

धर्म के साथ नहीं जोड़ा जा सकता। धारा 125(1)(ग) के स्पष्टीकरण के खंड (ख) में, जो "पत्नी" की यह परिभाषा करता है कि इसके अंतर्गत ऐसी पत्नी भी आती है, पति ने जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया है, इस बात को न्यायोचित ठहराने के लिए परिसीमाकारी ऐसे कोई शब्द नहीं हैं कि मुस्लिम स्त्रियां इसकी व्याप्ति से अपवर्जित हैं। धारा 125 की सही प्रकृति सही अर्थों में धर्मनिरपेक्ष है।

8. सर जेम्स फिट्सजेम्स स्टीफन ने, जिन्होंने वायसराय की परिषद् के विधि-सदस्य के रूप में दंड प्रक्रिया संहिता, 1872 पुरःस्थापित की थी, संहिता के अध्याय 9 के पुरोगामी उपबंध को, जिसमें धारा 125 आती है, आवारागर्दी को या कम से कम इसके परिणामों को रोकने का तरीका बतलाया। **जागीर कौर बनाम जशवंत सिंह**[1] में न्या० सुब्बा राव ने न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह कहा है कि 1898 की संहिता का अध्याय 36 का आशय, जिसमें धारा 488 थी और जो वर्तमान धारा 125 के अनुरूप है, "एक सामाजिक प्रयोजन को पूरा करना है।" **नानक चंद बनाम श्री चन्द्र किशोर अग्रवाल**[2] के मामले में न्या० सीकरी ने यह उपदर्शित करते हुए कि हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण-पोषण अधिनियम, 1956 की व्याप्ति और धारा 488 की व्याप्ति भिन्न है, यह कहा कि धारा 488 "सभी धर्मों के सभी व्यक्तियों पर लागू होती है और इसका पक्षकारों की स्वीय विधि से कोई संबंध नहीं है।"

9. सन् 1898 की संहिता की धारा 488 के अधीन भरण-पोषण के बारे में पत्नी का अधिकार उसकी विवाहित स्थिति के बने रहने पर निर्भर करता था। अतः यह अधिकार पति द्वारा एकतरफा तौर पर उसका विवाह-विच्छेद करके विफल किया जा सकता था, जैसा कि स्वीय मुस्लिम विधि के अधीन हो सकता है अथवा किसी अन्य विधि के अधीन उसके विरुद्ध विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त करके किया जा सकता था। इसी कठिनाई को दूर करने के लिए संयुक्त समिति ने यह सिफारिश की थी कि भरण-पोषण से संबंधित उपबंधों का लाभ ऐसी स्त्री को भी दिया जाना चाहिए जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, जब तक कि वह विवाह-विच्छेद के पश्चात् पुनर्विवाह नहीं कर लेती। धारा 125(1) के स्पष्टीकरण के खंड (ख) का यही उद्भव है जो यह उपबंध करता है कि "पत्नी" के अंतर्गत ऐसी स्त्री भी आती है जिसके पति ने उसका विवाह-विच्छेद कर लिया है या जिसने

---

[1] (1954) 2 एस० सी० आर० 73 पृ० 84.

[2] (1970) 1 एस० सी० आर० 565.

1985(4) eILR(PAT) SC 1

अपने पति से विवाह-विच्छेद कर लिया है और पुनर्विवाह नहीं किया है। इस उपबंध के अभाव में भी न्यायालय 1898 की संहिता के अधीन यह अभिनिर्धारित कर सकते थे कि भरण-पोषण से संबंधित उपबंध पक्षकारों को लागू होने वाली स्वीय विधि से स्वतंत्र हैं। "पत्नी" की परिभाषा में ऐसी स्त्री को शामिल करके जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, उपर्युक्त निष्कर्षों को और भी अधिक बल मिलता है। "पत्नी" से, उसके द्वारा या उसके पति के द्वारा माने जाने वाले धर्म के बावजूद भी, उपर्युक्त उपबंध में परिभाषित, पत्नी अभिप्रेत है। अतः ऐसी मुस्लिम पत्नी जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, जब तक उसने पुनर्विवाह नहीं किया है, धारा 125 के प्रयोजन के लिए "पत्नी" है। इस धारा के अधीन उसे उपलब्ध कानूनी अधिकार, उसको लागू स्वीय विधि के उपबंधों के द्वारा अप्रभावित रहता है।

10. इस निष्कर्ष को कि धारा 125 के द्वारा प्रदत्त अधिकार का प्रयोग पक्षकारों की स्वीय विधि के बावजूद भी किया जा सकता है, विशेषकर मुस्लिम पक्षकारों के बारे में, संहिता की धारा 125(3) के द्वितीय परन्तुक के स्पष्टीकरण में अंतर्विष्ट उपबंध से भी बल मिलता है। यह उपबंध यह कहता है कि यदि पति इस शर्त पर भरण-पोषण करने की प्रस्थापना करता है कि उसकी पत्नी उसके साथ रहे और वह पति के साथ रहने से इन्कार करती है तो मजिस्ट्रेट उसके द्वारा किए गए इंकार के किन्हीं आधारों पर विचार कर सकता है और ऐसी प्रस्थापना के किए जाने पर भी वह इस धारा के अधीन आदेश दे सकता है, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि ऐसा आदेश देने के लिए न्यायसंगत आधार हैं। परन्तुक के स्पष्टीकरण के अनुसार—

> "यदि पति ने अन्य स्त्री से विवाह कर लिया है या वह रखैल रखता है तो यह उसकी पत्नी के द्वारा उसके साथ रहने से इन्कार करने का न्यायसंगत आधार माना जाएगा।"

यह भलीभांति ज्ञात है कि "एक मुसलमान एक समय में चार पत्नियां रख सकता है, किंतु इससे अधिक नहीं। यदि वह उस दशा में पांचवीं पत्नी से विवाह करता है जबकि उसकी पहले ही चार पत्नियां हैं, तो ऐसा विवाह शून्य नहीं है, किंतु केवल अनियमित है।" (देखिए—मुल्लाकृत "मोहम्मडन लॉ", 18वां संस्करण, पैरा 255, पृष्ठ 285, जिसमें बेली का "डाइजैस्ट ऑफ मोहम्मडन लॉ", और अमीर अली का "मोहम्मडन लॉ", पांचवां संस्करण, जिल्द 2, पृष्ठ 280 उत्कथित हैं) यह स्पष्टीकरण पत्नी को अपने ऐसे पति के साथ रहने से इन्कार करने का अधिकार प्रदान करता है, यदि उसने दूसरा विवाह

कर लिया है—तीन या चार अन्य विवाहों की तो बात ही क्या। बिना किसी गलती के इससे यह दर्शित होता है कि धारा 125 स्वीय विधि पर अभिभावी होती है, यदि इन दोनों में कोई द्वन्द्व है।

11. अब यह सम्पूर्ण विवेचना कि धारा 125 द्वारा प्रदत्त अधिकार पक्षकारों की स्वीय विधि पर अभिभावी होता है, इस उपधारणा पर आधारित है कि इस धारा के उपबंधों में और मुस्लिम स्वीय विधि के उपबंधों में द्वन्द्व है। यह दलील कि शरीयत ऐक्ट, (1937 का सं० 26) की धारा 2 के कारण से, अन्य बातों के साथ-साथ, भरण-पोषण से संबंधित विषयों में विनिश्चय का नियम "मुस्लिम स्वीय विधि होगा", यह नियम भी ऐसी ही उपधारणा पर आधारित है। संहिता और मुस्लिम स्वीय विधि के बीच प्राथमिकता के प्रश्न के विनिश्चय का अवधारण हमने इस उपधारणा पर करने का प्रयास किया है कि इन दोनों में द्वन्द्व था, क्योंकि जहां तक यह बात हमारी शक्ति के अंतर्गत है, हम सदैव के लिए इस प्रश्न को शांत कर देना चाहते हैं कि क्या धारा 125 उस दशा में पक्षकारों की स्वीय विधि पर अभिभावी होगी, जहां कि इन दोनों में द्वन्द्व है।

12. अगला तार्किक कदम उस प्रश्न की परीक्षा करना है, जिस पर हमारे समक्ष पर्याप्त दलील दी गई है और वह यह कि क्या अपनी ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था करने के लिए, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, मुस्लिम पति के दायित्व के बारे में धारा 125 के उपबंधों और मुस्लिम स्वीय विधि के उपबंधों में द्वन्द्व है।

13. पति की और उन मध्यक्षेपियों की जो उसका समर्थन करते हैं, दलील यह है कि मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने का पति का दायित्व, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, इद्दत की अवधि तक ही सीमित है। अपनी इस प्रतिपादना के समर्थन में उन्होंने कुछ पाठ्य-पुस्तकों में अन्तर्विष्ट विधि के कथनों का अवलंब लिया। श्री मुल्ला-कृत "मोहम्मडन लॉ" (18वां संस्करण, पैरा 279, पृष्ठ 301) में यह कथन है कि "विवाह-विच्छेद के पश्चात् पत्नी इद्दत की अवधि के दौरान भरण-पोषण की हकदार है।" विद्वान् लेखक ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 302 पर यह कहा है कि—

> "जहां दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 488 के अधीन किसी पत्नी के भरण-पोषण के लिए आदेश किया जाता है और तत्पश्चात् पत्नी का विवाह-विच्छेद कर दिया जाता है, तो यह आदेश

1985(4) eILR(PAT) SC 1

इद्दत की अवधि की समाप्ति के पश्चात् प्रवर्तित नहीं रहेगा। परिणाम यह हुआ कि एक मुस्लिम व्यक्ति धारा 498 के अधीन उसके विरुद्ध पारित आदेश, ऐसा आदेश पारित किए जाने के तुरंत पश्चात्, अपनी पत्नी का विवाह-विच्छेद करके विफल कर सकता है। अपनी पत्नी का भरण-पोषण करने की उसकी बाध्यता, पत्नी की इद्दत की अवधि के पूरा होने पर, ऐसी दशा में समाप्त हो जाएगी।"

श्री तैयबजी कृत "मुस्लिम लॉ" (चौथा संस्करण, पैरा 304, पृ० 268-269) में निम्नलिखित कथन है—

"तलाक के पश्चात् इद्दत की अवधि की समाप्ति पर भरण-पोषण पाने का पत्नी का अधिकार समाप्त हो जाता है—चाहे यह अधिकार मुस्लिम विधि पर आधारित हो या दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन पारित आदेश पर आधारित हो।"

डॉ० पारस दीवान के अनुसार—

"जब विवाह-विच्छेद के द्वारा विवाह का विघटन हो जाता है, तो पत्नी इद्दत की अवधि के दौरान भरण-पोषण के लिए हकदार है···। इद्दत की अवधि की समाप्ति पर पत्नी किसी भी स्थिति में किसी भी भरण-पोषण के लिए हकदार नहीं है। मुस्लिम विधि अपनी ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने के लिए किसी व्यक्ति की किसी बाध्यता को मान्यता नहीं देती, जिस पत्नी का उसने विवाह-विच्छेद कर दिया था।" ("मुस्लिम लॉ इन माडर्न इंडिया", 1982 संस्करण, पृष्ठ 130)

14. उक्त पाठ्य-पुस्तकों के ये कथन इस प्रतिपादना को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं कि मुस्लिम पति अपनी ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने के लिए, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है और जो अपना भरण-पोषण करने के लिए समर्थ नहीं है, भरण-पोषण करने की बाध्यता के अधीन नहीं है। ऐसी अकिंचन पत्नी के लिए जिसका उसने विवाह-विच्छेद कर दिया है, भरण-पोषण की व्यवस्था के बारे में पति के दायित्व की सीमा, मात्रा और अवधि तीनों दृष्टि से, अवधारित करने के लिए मुस्लिम स्वीय विधि की सम्पूर्ण रूपरेखा को ध्यान में रखने की आवश्यकता होगी। मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन पति अपनी पत्नी के प्रति सम्मान के प्रतीकस्वरूप "मेहर" संदाय करने के लिए आबद्ध है। यह सही है कि पति अपनी पत्नी को "मेहर" (डावर) देने के लिए जितनी रकम वह चाहे तय कर सकता है,

किन्तु यह रकम "10 दिरहम" से कम नहीं हो सकती जो तीन या चार रुपए के बराबर है : ("मुल्ला कृत "मोहम्मडन लॉ", 18वां संस्करण, पैरा 286, पृ० 308) किन्तु इस बात का विनिश्चय करने के लिए जीवन के यथार्थ को ध्यान में रखना चाहिए। मेहर पत्नी के सम्मान का प्रतीक है। मेहर के रूप में देय तय की गयी राशि के बारे में साधारणत: यह समझा जाता है कि यह राशि विवाह और उसके पश्चात् की अवधि के दौरान पत्नी की सामान्य अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए है, किंतु मुस्लिम स्वीय विधि के ये उपबंध ऐसे मामलों के बारे में नहीं हैं जिनमें पत्नी विवाह-विच्छेद के बाद अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। ऊपर उद्धृत किए गए कथनों की व्याप्ति को उन मामलों में लागू करना हम न केवल गलत बल्कि अन्यायपूर्ण समझते हैं, जिन मामलों में ऐसी पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। हमारी यह राय है कि विधि के इन कथनों का लागू किया जाना ऐसे वर्ग के मामलों तक ही सीमित किया जाना चाहिए, जिन मामलों में उस पत्नी की निर्धनता के कारण, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, आवारागर्दी या दीन-हीनता की कोई संभावना नहीं है। हमारा यहां इस साधारण और मोटे प्रश्न से कोई संबंध नहीं है कि क्या सभी परिस्थितियों और सभी घटनाओं में पति अपनी पत्नी का भरण-पोषण करने के लिए दायी है अथवा नहीं, जिस पत्नी के अंतर्गत ऐसी पत्नी भी शामिल है जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है। यह प्रश्न धारा 125 की विषय-वस्तु नहीं है। यह धारा उन मामलों के बारे में है जहां किसी व्यक्ति के पास पर्याप्त साधन हैं और वह, अन्य व्यक्तियों के साथ-साथ ऐसी पत्नी का भरण-पोषण करने की उपेक्षा करता है या इन्कार करता है जो अपने भरण-पोषण करने में असमर्थ है। चूंकि मुस्लिम स्वीय विधि, जो कि इद्दत की अवधि तक ही ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, के लिए पत्नी के दायित्व को सीमित करती है, धारा 125 द्वारा अनुध्यात स्थिति की न तो कल्पना करती है और न इसे स्वीकार करती है, इसलिए यह अभिनिर्धारित करना गलत होगा कि मुस्लिम पति, अपनी स्वीय विधि के अनुसार अपनी ऐसी पत्नी के, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, इद्दत की अवधि के पश्चात् भरण-पोषण की व्यवस्था की बाध्यता के अधीन नहीं है। अपीलार्थी की इस दलील को इसलिए नामंजूर किया जाता है कि मुस्लिम स्वीय विधि के अनुसार अपनी ऐसी पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, के भरण-पोषण की व्यवस्था का उसका दायित्व इस तथ्य के बावजूद भी इद्दत की अवधि तक ही सीमित है कि वह (पत्नी) अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। अतः

1985(4) eILR(PAT) SC 1

सही स्थिति यह है कि यदि ऐसी पत्नी जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है, तो उसके भरण-पोषण की व्यवस्था करने का पति का दायित्व इद्दत की अवधि की समाप्ति पर ही समाप्त हो जाता है। किन्तु यदि वह अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह धारा 125 का अवलम्ब लेने की हकदार है। इस विचार-विमर्श का परिणाम यह है कि ऐसी पत्नी के भरण-पोषण की व्यवस्था से संबंधित पति की बाध्यता के प्रश्न पर, जिस पत्नी का विवाह-विच्छेद कर दिया गया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, मुस्लिम स्वीय विधि और धारा 125 के अधीन उपबंधों में कोई द्वन्द्व नहीं है।

15. इस प्रश्न पर कुरान की पवित्र पुस्तक से अधिक इस प्रकार की और कोई प्रमाणित नजीर नहीं है। मुसलमानों की पवित्र पुस्तक "कुरान" में 114 अध्याय हैं जो कुल ऐसे इलहाम हैं जिनके बारे में यह विश्वास किया जाता है कि ये इलहाम, खुदा की इच्छा की अंतिम अभिव्यक्ति के रूप में पैगम्बर मोहम्मद साहब को हुए थे : (दि कुरान : इंटरप्रेटिड बाई आर्थर जे० आर० बेरी)। कुरान की आयत सं० 214 और 242 यह दर्शित करती हैं कि अपनी ऐसी पत्नियों के लिए, जिनका विवाह-विच्छेद कर दिया गया है, भरण-पोषण की व्यवस्था करने की बाध्यता मुसलमान पतियों की है। इन आयतों का अरबी पाठ और इनका हिन्दी अनुवाद नीचे उद्धृत किया जाता है—

अरबी पाठ	**हिन्दी अनुवाद**
आयत सं० 241	
वा लिल मोतल्ला कतये	ऐसी स्त्रियों के लिए जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है,
मता उन	भरण-पोषण (की व्यवस्था की जानी चाहिए)
बिल मारूफाये	एक उचित (माप के) आधार पर
हाक्कुवान	यह कर्त्तव्य है
अलाल मुत्ताक्वीना	संमार्गियों का।
आयत सं० 242	
कजालेका युबाएयानुल्लाहो	इस प्रकार से परम पिता परमात्मा
लकूम आयातेही ला अल्लाकुम	अपने संकेत (आदेश) स्पष्ट करता है
ताक्यूलून	तुम्हारे लिए, ताकि तुम समझ सको।

(देखिए—"दि होली कुरान"—युसफ अली, 96)।

1985(4) eILR(PAT) SC 1

इन आयतों के अनुवाद के सही होने के बारे में कोई विवाद नहीं है, सिवाय इसके कि अपीलार्थी की दलील यह है कि आयत सं० 241 में आने वाले शब्द "मता" से "व्यवस्था" (प्रोविजन) अभिप्रेत है, "भरण-पोषण" (मेंटिनेंस) नहीं। यह भेद बिना किसी अंतर के है। आल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के इस लंगड़े अभिवाक् से भी हम प्रभावित नहीं हुए हैं कि आयत सं० 241 में दिया गया उपदेश "मुत्ताक्वीना" अर्थात् अत्यधिक नेक और परमात्मा से डरने वाले व्यक्तियों के लिए है, और साधारण मुसलमानों अर्थात् "मुसलमीन" के लिए नहीं है। कुरान की आयत सं० 242 में यह कहा गया है कि : "यह आशा की जाती है कि तुम अपने सामान्य ज्ञान का प्रयोग करोगे।"

16. मोहम्मद जफरुल्लाह की पुस्तक, "दि कुरान" (पृ० 38) में दी गयी दो आयतों का हिन्दी पाठ इस प्रकार है—

> *"ऐसी स्त्रियों के लिए भी जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है, जो कुछ उचित है उसके अनुसार व्यवस्था होगी। संमार्गियों के लिए यह आबद्धकर बाध्यता है। इस प्रकार से अल्लाह अपने आदेश तुम्हें स्पष्ट करता है कि तुम उसे समझ सको।"

17. "दि मीनिंग आफ दि कुरान" नामक पुस्तक में (जिल्द 1, बोर्ड ऑफ इस्लामिक पब्लिकेशंस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित) आयत सं० 240 से लेकर 242 का अनुवाद इस प्रकार है—

****240-241 :**

> "आप में से जो मर जाएंगे और अपने पीछे पत्नियां छोड़ जाएंगे उन्हें विल करनी चाहिए कि उनके लिए (पत्नियों के लिए) एक वर्ष के भरण-पोषण की व्यवस्था की जानी चाहिए और उन्हें घर से निष्कासित नहीं किया जाना चाहिए। किन्तु यदि वे

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"For divorced women also there shall be provision according to what is fair. This is an obligation binding on the righteous. Thus does Allah make His commandments clear to you that you may understand."

**"Those of you, who shall die and leave wives behind them, should make a will to the effect that they should be provided with a year's maintenance and should not be turned out of their homes. But if

(पत्नियां) अपनी इच्छा से ही घर छोड़ती हैं तो तुम उस बात के लिए उत्तरदायी नहीं होगे, जो वे उचित रूप में अपने आप चुनती हैं; अल्लाह सर्वशक्तिमान है, सर्वज्ञ है। इसी प्रकार से उन स्त्रियों को भी, जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है, जाने-पहचाने उचित मानदंड के अनुसार कुछ दिया जाना चाहिए। प्रभु से डरने वाले लोगों पर यह बाध्यता है।"

आयत सं० 242

*इस प्रकार से अल्लाह अपने आदेश स्पष्ट करता है; तुम से यह आशा की जाती है कि तुम अपने सामान्य ज्ञान का प्रयोग करो।"

18. डॉ० अल्लामा खादिम रहमानी नूरी की पुस्तक, "दि रनिंग कमैंट्री आफ दि होली कुरान" (1964 का संस्करण) में आयत 241 का अनुवाद इस प्रकार किया गया है—

"241

**और ऐसी स्त्री के लिए (भी), जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, उचित रूप में (उसकी मेहर के अतिरिक्त) व्यवस्था (की जानी चाहिए); (यह) श्रद्धालुओं का (लाजिम) कर्त्तव्य है।"

19. मार्माड्यूक पित्थाल द्वारा लिखित "दि मीनिंग आफ दि ग्लोरियस कुरान", टैक्सट एंड एक्सपलेनेटरी ट्रांसलेशन" (ताज कं० लिमिटेड, करांची) में आयत सं० 241 का अनुवाद इस प्रकार है—

---

they leave their homes of their own accord, you shall not be answerable for whatever they choose for themselves in a fair way; Allah is All-Powerful, All-wise. Likewise, the divorced Women should also be given something in accordance with the known fair standard. This is an obligation upon the God-fearing people.

*"Thus Allah makes clear His commandments for you : It is expected that you will use your commonsense."

**"And for the divorced Woman (also) a Provision (should be made) with fairness (in addition to her dower); (this is) a duty (incombent) on the reverent."

"241

*(ऐसी) स्त्रियों के लिए, जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है, दया के तौर पर व्यवस्था : यह उन लोगों का फर्ज है जो (बदी) को दूर करना चाहते हैं।"

20. अंत में आर्थर जे० आर्बेरी द्वारा लिखित "दि कुरान इन्टरपरेटिड" पुस्तक में आयत सं० 241 का अनुवाद इस प्रकार दिया गया है—

**"241

ऐसी स्त्रियों के लिए जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है, सम्मानजनक व्यवस्था होगी—खुदा से डरने वालों के लिए ये बाध्यताएं हैं।

इस प्रकार से खुदा अपने संकेत तुम्हारे लिए स्पष्ट करता है :
खुशी से तुम इसे समझोगे।"

21. ऊपर उद्धृत अपनी पुस्तक "दि रनिंग कमैंट्री आफ दि होली कुरान" में डॉ० के० आर० नूरी इस पुस्तक की प्रस्तावना में यह कहते हैं कि—

"इस्लाम धर्म में विश्वास का अर्थ मात्र किसी चीज के विद्यमान होने को कबूल करना ही नहीं है, वस्तुत: इसका अर्थ है अपने कर्मों को विश्वास में बदलना। बिना कर्म के शब्दों का इस्लाम में कोई अर्थ नहीं है। अत: यह पद कि "खुदा में विश्वास रखो और नेकी करो", सारी कुरान में एक उक्ति के रूप में प्रयोग किया गया है। किसी चीज में विश्वास का अर्थ है कि मनुष्य को उस चीज द्वारा प्राप्त मार्गदर्शन अथवा अनुबंधन को अपने कार्य में परिणत करने की खूबियां पैदा करनी चाहिएं। अल्लाह में यकीन का मतलब है कि दुनिया के बनाने वाले के अस्तित्व को स्वीकार करने के अतिरिक्त हमें उसके हुकम के प्रति आज्ञाकारिता दिखानी होती है......।"

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"For divorced women a provision in kindness : A duty for those who ward off (evil)."

**There shall be for divorced women provision honourable—an obligation on the godfearing.

So God makes clear His signs for you :
Happily you will understand."

22. ये आयतें ऐसे किसी ऐसे संदेह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ती कि कुरान मुसलमान पति पर ऐसी पत्नी के लिए व्यवस्था करने या उसके भरण-पोषण करने की बाध्यता अधिरोपित करती है, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है। इसके विपरीत दी गयी दलील कुरान की शिक्षा के प्रति और भी कम न्याय करती है। जैसा कि श्री एम० हिदायतुल्ला ने मुल्ला कृत "मोहम्मडन लॉ" की प्रस्तावना में कहा है कि कुरान 'अल फुर्कन' है अर्थात् ऐसी पुस्तक जो स्वयं असत्य से सत्य की ओर और असत् से सत् की ओर रास्ता दिखाती है।

23. अपीलार्थी की दलील का दूसरा मुद्दा यह है कि धारा 125 के अधीन किया गया आवेदन धारा 127(3)(ख) में अंतर्विष्ट उपबंधों के कारण खारिज करने योग्य है। यह धारा यथासंभव यह उपबंध करती है कि मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के आदेश को रद्द कर देगा, यदि पति पत्नी का विवाह-विच्छेद कर देता है और पत्नी ने "वह पूरी धनराशि प्राप्त कर ली है जो पक्षकारों को लागू किसी रूढ़िजन्य या स्वीय विधि के अधीन ऐसे विवाह-विच्छेद पर देय थी।" इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन "विवाह-विच्छेद पर" पत्नी को कोई रकम संदेय है? हमें अंधेरे में भटकने की आवश्यकता नहीं और न कोई अनुमान लगाने की आवश्यकता है कि यह रकम किस किस्म की रकम हो सकती है क्योंकि अपीलार्थी की ओर से तथा उसका समर्थन करने वाले मध्यक्षेपियों की ओर से हमारे समक्ष एकमात्र यह दलील दी गई है कि विवाह-विच्छेद पर पत्नी को पति के द्वारा संदेय रकम "मेहर" है। हम इस दलील को स्वीकार करना असंभव पाते हैं।

24. मुल्ला कृत "प्रिंसिपल्स ऑफ मोहम्मडन लॉ" (18वां संस्करण, पृ० 308) में मेहर या डावर की परिभाषा, पैरा 285 में इस प्रकार दी गई है: "कोई धनराशि या अन्य सम्पत्ति जिसे पत्नी विवाह के प्रतिफलस्वरूप पति से प्राप्त करने की हकदार है।" डॉ० पारस दीवान ने अपनी पुस्तक "मुस्लिम लॉ इन मॉडर्न इंडिया" (1982 का संस्करण, पृ० 60) में इस परिभाषा की इस आधार पर आलोचना की है कि मेहर "विवाह के प्रतिफलस्वरूप" संदेय नहीं है, अपितु यह पत्नी के प्रति सम्मान के प्रतीकस्वरूप पति पर विधि द्वारा अधिरोपित एक बाध्यता है—जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट है कि विवाह के समय मेहर की रकम या किस्म का विनिश्चित न किया जाना विवाह की विधिमान्यता को प्रभावित नहीं करता। हमें इस संविवाद में पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं और निस्संदेह स्वयं मुल्ला की पुस्तक के पृ० 308 पर यह और कथन है कि "प्रतिफल का प्रयोग इस भाव में किया गया है जिस भाव में इसका प्रयोग संविदा अधिनियम में तथा मुस्लिम विधि

के अधीन किमा गया है।" मेहर पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप पति पर अधिरोपित बाध्यता है। हमारा संबंध यह पता लगाने से है कि क्या मेहर पति द्वारा पत्नी को विवाह-विच्छेद (किए जाने) पर संदेय है। इस बारे में कुछ भ्रम इस तथ्य के कारण हुआ है कि मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन 'मेहर' की रकम को दो भागों में बांट दिया जाता है, एक वह जो कि "तुरन्त" (प्रॉम्ट) कही जाती है जो कि मांगने पर संदेय है और दूसरी को "आस्थगित" (डैफर्ड) कहा जाता है जो कि मृत्यु अथवा विवाह-विच्छेद के कारण विवाह के विघटन पर संदेय होती है। किंतु यह तथ्य कि आस्थगित मेहर विवाह के विघटन पर संदेय है, इस निष्कर्ष को न्यायोचित नहीं ठहरा सकती कि यह "विवाह-विच्छेद पर देय है।" यह मान लेते हुए कि किसी मामले विशेष में मेहर की सम्पूर्ण रकम विवाह-विच्छेद के द्वारा विघटित विवाह पर संदेय आस्थगित वस्तु है फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह ऐसी रकम है जो विवाह-विच्छेद पर संदेय है। विवाह-विच्छेद (तलाक) समय का ऐसा सुविधाजनक और निश्चित प्रक्रम हो सकता है जबकि आस्थगित रकम का संदाय पति द्वारा पत्नी को किया जाना होता है किंतु रकम का संदाय विवाह-विच्छेद के कारण नहीं हुआ है, और यही कुछ "विवाह-विच्छेद पर देय" अभिव्यक्ति से अभिप्रेत है जो संहिता की धारा 127(3)(ख) में आती है। यदि मेहर ऐसी रकम है जिसको विवाह के प्रतिफलस्वरूप, पत्नी पति से प्राप्त करने के लिए हकदार है तो यह बात विवाह-विच्छेद के प्रतिफलार्थ संदेय रकम के बिल्कुल विपरीत है। विवाह-विच्छेद, विवाह का विघटन कर देता है। अत: जो रकम विवाह के प्रतिफलार्थ संदेय है उसे संभवत: विवाह-विच्छेद के प्रतिफलार्थ संदेय रकम नहीं कहा जा सकता। आनुकल्पिक यह दलील कि मेहर पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप पति पर अधिरोपित एक बाध्यता है, इस बात के लिए पूर्णत: अहितकर है कि यह रकम विवाह-विच्छेद पर पत्नी को संदेय है। कोई भी व्यक्ति किसी स्त्री से प्रेम, सुंदरता, विद्वता के कारण अथवा इनमें से किसी (कारण) के बिना भी विवाह कर सकता है। और वह अपनी पत्नी के सम्मान के प्रतीकस्वरूप उसके साथ कोई रकम देय तय कर सकता है। किंतु वह उस स्त्री के सम्मान के प्रतीकस्वरूप उसका विवाह-विच्छेद कभी नहीं करता। अत: पत्नी को सम्मानस्वरूप संदेय रकम "विवाह-विच्छेद पर संदेय" रकम नहीं हो सकती।

25. इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध की गयी अपील में, **हमीरा बीबी** बनाम **जुबेदा बीबी**[1] के मामले में

---

[1] [1915-16] 43 इंडियन अपील्स 294.

प्रिवी कौंसिल ने मेहर की प्रकृति और इसकी विशेषता को निम्नलिखित शब्दों में संक्षिप्त किया है—

> "मेहर मुस्लिम विधि के अधीन विवाह की हैसियत के लिए एक आवश्यक तत्त्व है; उस सीमा तक तो यह ऐसा है कि जब विवाह के समय मेहर अविनिर्दिष्ट है, तो विधि यह घोषणा कर सकती है कि निश्चित सिद्धांतों के आधार पर इसका न्याय-निर्णयन (विनिश्चय) किया जाना चाहिए। विवाह के लिए प्रतिफल मानते हुए, सिद्धांततः यह निष्पत्ति पर संदेय है; किन्तु विधि इसका विभाजन दो भागों में अनुज्ञात करती है—एक जिसे "तुरन्त" (प्राम्प्ट डावर) कहा जाता है जो कि विवाह बंधन में बंधने से पूर्व पत्नी को संदेय है और दूसरे भाग को "आस्थगित" (डैफर्ड डावर) कहा जाता है जो मृत्यु अथवा दोनों पक्षकारों के द्वारा अथवा विवाह-विच्छेद के द्वारा विवाह की संविदा के विघटन पर संदेय है।" (पृ० 300-301)

26. विधि का यह कथन **सैय्यद साबिर हुसैन** बनाम **फर्जंद हुसैन**[1] में प्रिवी कौंसिल के एक दूसरे विनिश्चय में भी अंगीकार किया गया था। यह बहुत समुचित बात नहीं है और यह कहना भी कुछ ईर्ष्यास्पिद लगता है कि न्यायालय की कोई न्यायपीठ विशेष "बलशाली" है, किंतु हम इस बात का उल्लेख करने के लोभ का संवर्ण नहीं कर सकते कि श्री सैय्यद अमीर अली, हमीरा बीबी के मामले में पक्षकार थे जबकि सर शादी लाल, सैय्यद साबिर हुसैन के विनिश्चय के पक्षकार थे। इन विनिश्चयों से यह प्रतीत होता है कि मेहर का संदाय भविष्य में किसी तारीख तक आस्थगित किया जा सकता है, उदाहरण के रूप में मृत्यु अथवा विवाह-विच्छेद तक, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि आस्थगित मेहर का संदाय इन घटनाओं के कारण ही हो सकता।

27. अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गयी है कि राज्य सभा की 18 दिसम्बर, 1973 की कार्यवाही (जिल्द 86, स्तम्भ 186) जबकि वह विधेयक विचाराधीन था, जिसके परिणामस्वरूप 1973 की संहिता पारित की गयी, यह दर्शित करती है कि संसद का आशय मुस्लिम स्वीय विधि के उपबंधों को अछूता ही छोड़ना था। इस संबंध में तत्कालीन गृह राज्य मंत्री, श्री राम-निवास मिर्धा द्वारा किए गए निम्नलिखित कथन का अवलम्ब लिया गया है—

> "डॉ० व्यास ने बड़ी विद्वता से ये कुछ मत व्यक्त किए हैं कि मुस्लिम विधि के अधीन ऐसी पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद कर दिया

---

[1] 65 आई० ए० 119, पृ० 127.

1985(4) eILR(PAT) SC 1

गया है, न्यायपूर्ण व्यवहार की अधिकारिणी है और उसे जो कुछ भी साम्यापूर्ण या विधिक रूप से उसे देय है, वह उसे मिलना चाहिए। ठीक है, मैं इस पहलू पर और अधिक विचार नहीं करूंगा, किन्तु यह कहना चाहूंगा कि हम मुसलमानों की रूढ़िजन्य विधि में दंड प्रक्रिया संहिता के माध्यम से हस्तक्षेप नहीं करना चाहेंगे। यदि मुस्लिम स्वीय विधि में किसी परिवर्तन की मांग है, तो यह मांग वस्तुतः स्वयं मुस्लिम समुदाय की ओर से ही आनी चाहिए और इससे पूर्व कि हम इस रूढ़िजन्य अधिकार में परिवर्तन करें अथवा उनकी स्वीय विधि में परिवर्तन करें, हमें मुस्लिम जनता की राय को इन मुद्दों पर स्पष्ट होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां कि हम ऐसा कर सकते हैं। किन्तु जैसा कि मैंने स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, विधेयक में दिया गया उपबंध पूर्ववर्ती स्थिति की तुलना में एक प्रगतिशील कदम है। ऐसी स्त्रियों को, जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है, खंड 125 की परिधि में शामिल कर लिया गया है और इसके अंतर्गत लाया गया है, किन्तु खंड 127 में इस संशोधन के द्वारा एक परिसीमा अधिरोपित की जा रही है अर्थात् यह कि भरण-पोषण का आदेश, स्वीय विधि के अधीन देय रकम का संदाय कर दिए जाने के पश्चात्, प्रवृत्त नहीं रह जाएगा। यह व्यवस्था उन दो स्थितियों के बीच एक रुचिकर समझौता है जिन्हें विधि का पारम्परिक निर्वचन या पारम्परिक विधि की राय के प्रति रियायत और इस समस्या के बारे में उदार दृष्टिकोण कहा गया है। हमने एक प्रगतिपूर्ण कदम उठाया है और इसी दिशा में मुस्लिम स्त्रियों के जो स्वीय अधिकार हैं उनका अतिक्रमण करने का प्रयास नहीं किया है। इसलिए मेरा विचार है कि इससे सदस्यों का समाधान हो जाना चाहिए कि हमने जो कुछ आगे कदम बढ़ाया है वह सही दिशा में बढ़ाया है और इसका स्वागत किया जाना चाहिए।"

28. इस भाषण से यह प्रतीत होता है कि सरकार की इच्छा दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के माध्यम से मुस्लिम स्वीय विधि में हस्तक्षेप करने की नहीं थी। सरकार यह चाहती थी कि मुस्लिम समुदाय इस दिशा में पहल करे और मुस्लिम जनता की राय उनकी स्वीय विधि के सुधारों के बारे में स्पष्ट हो। तथापि, हमारा इस प्रश्न से कोई संबंध नहीं है कि सरकार संहिता की धारा 125 और 127 अधिनियमित करके मुस्लिम स्वीय विधि में कोई परिवर्तन करना चाहती थी अथवा नहीं। जैसा कि हमने पहले कहा है, और

जैसा कि मंत्री महोदय द्वारा भी स्वीकार किया गया है, सरकार ने "पत्नी" अभिव्यक्ति में ऐसी पत्नी को शामिल करके, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, इसे परिभाषित करते हुए ऐसा परिवर्तन अंत:स्थापित किया था। सरकार ने यह उपबंध करके एक और परिवर्तन भी अंत:स्थापित किया कि यह तथ्य कि पति ने एक अन्य स्त्री से विवाह कर लिया है, उसके साथ रहने से पत्नी के इन्कार का एक न्यायोचित आधार है। धारा 127(3)(ख) में अन्तर्विष्ट उपबंध इस भ्रम के कारण अंत:स्थापित किया गया लगता है कि मेहर "विवाह-विच्छेद पर" संदेय रकम है। किन्तु यह बात पत्नी को सम्मान के प्रतीकस्वरूप संदेय रकम को विवाह-विच्छेद पर संदेय रकम में नहीं बदल सकती।

29. इस विवेचना से यह निष्कर्ष निकलना चाहिए, अनिवार्यत: जो कुछ लम्बी हो गयी है, कि बाई ताहिरा (न्या० कृष्ण अय्यर, तुलजापुरकर और पाठक) तथा फजलून बी (न्या० कृष्ण अय्यर, हममें से एक, न्या० चिन्नप्पा रेड्डी और न्या० ए० पी० सेन) में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय सही हैं। न्या० कृष्ण अय्यर ने, जिन्होंने दोनों ही उपर्युक्त मामलों में न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाया था, विधि के प्रयोजन में प्रगति लाने के लिए निर्वचन की उद्देश्यात्मक और योजनात्मक पद्धति का बहुत अवलंब लिया। अर्थान्वयन की इन तकनीकों का समाज के पीड़ित वर्गों की परिस्थितियों में सुधार लाने से संबंधित कानूनों के निर्वचन में अपना महत्त्व है। हमने यह देखने का प्रयत्न किया है कि कानून की भाषा पर ध्यान देते हुए यह निष्कर्ष निकालने के सिवाय और कोई चारा नहीं कि ऐसी मुस्लिम पत्नी, जिसका विवाह-विच्छेद हो गया है, धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के लिए आवेदन करने की हकदार है और यह कि मुस्लिम स्वीय विधि के अधीन मेहर, ऐसी रकम नहीं है जो विवाह-विच्छेद पर संदेय है।

30. यद्यपि बाई ताहिरा के मामले में सही तौर से ही यह विनिश्चय किया गया था, किन्तु ससम्मान हम उस गलती की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे जो निर्णय में हो गयी थी। रिपोर्ट के पृष्ठ 80 पर धारा 127(3)(ख) के संदर्भ में एक यह कथन किया गया है: "मेहर की रकम का संदाय, रूढ़िगत (बाध्यता) के निर्वहनस्वरूप, उक्त उपबंध के संज्ञान के भीतर है।" किन्तु हमने यह दृष्टिकोण अपनाया है कि मेहर, चूंकि विवाह-विच्छेद पर संदेय नहीं है इसलिए यह उक्त उपबंध के अर्थान्तर्गत नहीं आती।

31. यह बड़े खेद का विषय है कि उन कुछ मध्यक्षेपियों ने, जिन्होंने अपीलार्थी का समर्थन किया है, ऐसी स्त्रियों के भरण-पोषण के अधिकार को

निष्फल बनाने के लिए जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, अनावश्यक जोश का प्रदर्शन करके बड़ा हठी दृष्टिकोण अपनाया है। आल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की लिखित दलीलों में, यहां तक प्रख्यान किया गया है कि इस बात की जांच करना असंगत है कि ऐसी मुस्लिम स्त्रियों को अपना भरण-पोषण कैसे करना चाहिए जिनका विवाह-विच्छेद हो गया है। बोर्ड का सरल-सा उत्तर यह है कि मुस्लिम स्वीय विधि ने मेहर की पद्धति ऐसी ही स्त्रियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बनायी है और यदि कोई स्त्री निर्धन है तो उसे अपनी सहायता के लिए अपने भतीजों, चचेरे भाइयों तथा अन्य रिश्तेदारों से सहायता मांगनी चाहिए। विधि तथा जीवन का यह बहुत ही अयुक्तियुक्त दृष्टिकोण है। हम इस बात की प्रशंसा करते हैं कि सामाजिक कार्यकर्ता, बेगम तैमूर जहां ने, जो मुस्लिम महिलाओं के उद्धार के लिए दिल्ली सिटी विमैंस एसोसिएशन के साथ काम कर रही है, श्री दानियाल लतीफी को समर्थन देने के लिए मध्यक्षेप किया है, जो पत्नी की ओर से हाजिर हुए हैं।

32. यह भी बड़े खेद की बात है कि संविधान का अनुच्छेद 44 अब तक निष्क्रिय बनकर रह गया है। इस अनुच्छेद में यह उपबंध किया गया है: "राज्य, भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।" देश में एक समान सिविल संहिता बनाने के बारे में शासकीय कार्यवाही का अब तक कोई साक्ष्य नहीं है। असल में, यह विश्वास जड़ पकड़ता जा रहा है कि मुस्लिम स्वीय विधि में सुधार के मामले में मुस्लिम समुदाय को पहल करनी चाहिए। ऐसी विधियों के प्रति भिन्न-भिन्न निष्ठाओं को दूर करने के लिए, जिन विधियों में विरोधात्मक विचारधाराएं हैं, एक सामान्य सिविल संहिता राष्ट्रीय एकता के उद्देश्य में सहायता करेगी। इस मुद्दे के बारे में कोई भी समुदाय अनुग्रहपूर्ण रियायतें देने की पहल नहीं करना चाहता। इसलिए देश के नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का कर्त्तव्य राज्य पर है और निस्संदेह राज्य में ऐसा करने की विधिक क्षमता है। इस मामले में एक काउन्सेल ने बड़े धीमे स्वर में यह कहा, किन्तु जो कुछ-कुछ सुनाई दे गया, कि विधिक क्षमता होना एक और बात है किन्तु विधिक क्षमता का प्रयोग करने के लिए (राज्य में) राजनैतिक हिम्मत दिखाना/होना एक बिल्कुल ही दूसरी बात है। हम विभिन्न धर्मों और पंथों के व्यक्तियों को एक ही सामान्य प्लेटफार्म पर लाने में अन्तर्वलित कठिनाइयों को समझते हैं। किन्तु यदि संविधान का कोई वास्तविक अर्थ है तो इस दिशा में पहल करनी ही पड़ेगी। अनिवार्यतः न्यायालयों को एक सुधारक की भूमिका निभानी पड़ेगी, क्योंकि यह बात

न्यायालय के संवेदनशील न्यायाधीशों की सहनशीलता से बाहर है कि अन्याय को बने रहने दिया जाए, विशेषकर जब अन्याय इतना स्पष्ट है। किन्तु न्यायालय द्वारा स्वीय विधि के बीच इस खाई को पाटने के लिए किए जाने वाले छुट-पुट प्रयास एक सामान्य सिविल संहिता का स्थान नहीं ले सकते। प्रत्येक मामले में न्याय देने की तुलना में सभी को एकदम एक साथ समान न्याय देने का तरीका अधिक संतोषजनक प्रतीत होता है।

33. डॉ० ताहिर महमूद ने अपनी पुस्तक "मुस्लिम पर्सनल लॉ" (1977 का संस्करण, पृ० 200-202) में भारत के सभी नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता बनाए जाने के बारे में एक जोरदार अभिवाक् किया है। वे कहते हैं : "सर्वधर्म संभाव के उद्देश्य के अनुसरण में राज्य को धर्म पर आधारित स्वीय विधियों को लागू करना बंद कर देना चाहिए।" वे चाहते हैं कि इस बारे में पहल बहुमत (हिन्दू) समुदाय की ओर से की जानी चाहिए, किन्तु हमें यह समझ लेना चाहिए कि पहल किसी की ओर से की जाती अथवा नहीं की जाती, किन्तु राज्य को तो अवश्य कार्रवाई करनी चाहिए। विद्वान् लेखक द्वारा सम्पूर्ण मुस्लिम समुदाय को की गयी अपील को उद्धृत करना लाभकर होगा।

> "राज्य की विधायी अधिकारिता से अपनी पारम्परिक स्वीय विधि को 'उन्मुक्ति' दिलाने के चक्कर में धार्मिक और राजनैतिक दबाव डालने में अपनी शक्तियों को नष्ट करने की बजाए मुसलमानों के लिए अच्छा होगा यदि वे इस बात की जांच करना और यह दर्शाना प्रारंभ करें कि समय के कारण बूढ़े और कालदोषी निर्वचनों से मुक्त सही मुस्लिम विधियां भारत की सामान्य सिविल संहिता को किस प्रकार मूल्यवान बना सकती हैं।"

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ इस्लामिक स्टडीज, नई दिल्ली के इस्लामिक एण्ड कम्पेरिटिव लॉ विभाग के तत्वावधान में 18 अक्तूबर, 1980 को आयोजित एक विचारगोष्ठी में भी मुस्लिम समुदाय से अपने व्यवहार के द्वारा विवाह और विवाह-विच्छेद संबंधी मुस्लिम संकल्पनाओं के प्रति सही समझ दिखाने की अपील की गयी है (देखिए—इस्लाम एंड कम्पेरिटिव लॉ क्वार्टरली, अप्रैल-जून, 1981, पृ० 146)

34. इससे पूर्व कि हम इस मामले पर विचार समाप्त करें, हम विवाह और कौटुम्बिक गतिविधियों से संबंधित आयोग की, जिसकी नियुक्ति 4 अगस्त, 1955 के एक संकल्प द्वारा पाकिस्तान सरकार द्वारा की गयी थी,

रिपोर्ट की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे (रिपोर्ट के पृ० 215 पर) प्रश्न सं० 5 के उत्तर में आयोग ने यह कहा है—

> "भारी संख्या में अधेड़ उम्र की अनेक ऐसी स्त्रियों को, जिनका बिना किसी कारण के ही विवाह-विच्छेद किया जा रहा है, सर ढकने की किसी छाया के तथा अपने को एवं अपनी संतान का भरण-पोषण करने के किसी साधन के बिना सड़क पर नहीं ढकेल दिया जाना चाहिए।"

रिपोर्ट के अंत में यह कहा गया है कि—

> "अल्लामा इकबाल के शब्दों में, निकट भविष्य में मुस्लिम देशों के समक्ष जो प्रश्न आने वाला है वह यह है कि इस्लाम की विधि विकास के योग्य है अथवा नहीं—यह एक ऐसा प्रश्न है जिसके उत्तर के लिए भारी बौद्धिक प्रयास की आवश्यकता होगी, किन्तु निश्चय ही इसका उत्तर सकारात्मक होगा।"

35. इन कारणों से हम इस अपील को खारिज करते हैं और उच्च न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करते हैं। अपीलार्थी, प्रत्यर्थी सं० 1 को अपील का खर्चा देगा, जो खर्चा हम 10 हजार रुपए निश्चित करते हैं। यह कहना अनावश्यक है कि प्रत्यर्थी को परिस्थितियों में परिवर्तन का सबूत देने पर, जैसा कि उक्त धारा में अनुध्यात है, उसके लिए मंजूर किए गए भरण-पोषण के भत्ते में वृद्धि करने के लिए संहिता की धारा 127(1) के अधीन आवेदन करने की छूट होगी।

अपील खारिज की गयी।

श०